भारतीय छोड़ो आन्दोलन के समाजवादी सेनानी

डॉ0 अमित कुमार*

भारत में समाजवादी चिन्तन का विकास जिस सन्दर्भ में हुआ वह यूरोपीय समाजवाद के सन्दर्भ से दो बातों में भिन्न था। भारत में समाजवाद का विकास सामाजिक तथा आर्थिक पुनर्निर्माण की एक योजना के रूप में ही नहीं हुआ, बल्कि वह क्रूर विदेशी साम्राज्यवाद के बन्धनों से राजनीतिक मुक्ति की एक विचारधारा के रूप में भी विकसित हुआ। 1900 से 1947 के काल में भारत की मूल समस्या देश की राजनीतिक स्वतंत्रता थी। कोई भी लोकप्रिय दल उसकी उपेक्षा नहीं कर सकता था।

भारतीय समाजवादी चिन्तकों में राजा राममोहन राय, स्वामी दयानन्द सरस्वती, रामकृष्ण, स्वामी विवेकानन्द, बाल गंगाधर तिलक, माहत्मा गाँधी, जवाहरलाल नेहरू, नरेन्द्र देव, जयप्रकाश नारायण तथा राम मनोहर लोहिया का योगदान अनुकरणीय रहा है।

रामकृष्ण द्वारा प्रतिपादित समन्वयवाद एवं उदार दृष्टिकोण से विवेकानन्द, गाँधी, रवीन्द्रनाथ एवं राधाकृष्णन को एक उदार विश्व–दृष्टि विकसित करने में बहुत सहायता मिली।

वे सच्चे समाजवादी इसलिए थे क्योंकि वे व्यक्ति के हित की अपेक्षा समाज के हित को अधिक महत्त्व देते थे। वे तथाकथित समाजवादियों से कहीं ऊँचे दर्जे के और सच्चे समाजवादी थे क्योंकि उनका आचरण उनके सिद्धान्तों के अनुरूप था। पूँजीवाद का अन्त करने की उनकी उतनी ही इच्छा थी जितना किसी बड़े से बड़े समाजवादी या साम्यवादी की हो सकती है। वे सामाजिक समानता के प्रवर्तक थे और चाहते थे कि सभी व्यक्तियों और व्यवसायों की समान प्रतिष्ठा होनी चाहिए।

मई 1926 में कांग्रेस समाजवादी दल की स्थापना हुई। समाजवादी विचारों को लोकप्रिय बनाने की दिशा में इस घटना का विशेष महत्त्व था। उस समय तक समाजवाद अथवा मार्क्सवाद अस्थिर विचारों का अस्पष्ट पुंज था। कांग्रेस समाजवादी दल की स्थापना भारत में समाजवाद के संगठनात्मक विकास में एक महत्त्वपूर्ण घटना थी। बिहार समाजवादी दल 1931 ई० में स्थापित किया गया, और 1934 ई0 में बम्बई समाजवादी गुट कायम हुआ। कांग्रेस समाजवादी दल की स्थापना से सभी प्रान्तीय संठनों और गुटों को अखिल भारतीय आधार तथा मंच मिल गया। समाजवादियों का पहला अखिल भारतीय सम्मेलन 17 मई, 1934 को पटना में नरेन्द्रदेव की अध्यक्षता में हुआ। इस दल की स्थापना में जयप्रकाश नारायण का मुख्य हाथ था। अच्युत पटवर्धन, यूसुफ मेहरअली तथा अशोक मेहता ने इस कार्य में उनकी घनिष्ठ सहायता की थी। सन् 1948 के नासिक सम्मेलन में समाजवादियों ने कांग्रेस को छोड़ देने का निर्णय किया, क्योंकि कांग्रेस संगठन के भीतर आन्तरिक गुटों के निर्माण को अनुज्ञा नहीं देती थी। इस प्रकार चौदह वर्ष तक कांग्रेस में रहने के उपरान्त समाजवादियों ने उस दल का परित्याग कर दिया और भारतीय समाजवादी दल नाम का एक दल कायम कर लिया।

जयप्रकाश नारायण के अनुसार समाजवाद उन प्रमुख मूल्यों के विरुद्ध नहीं है जिनका भारतीय संस्कृति ने पोषण किया। भारतीय संस्कृति ने आदर्श को सर्वोपरि माना है कि व्यक्ति को निम्नकोटि की वासनाओं तथा परिग्रह की वृत्ति से मुक्ति प्राप्त करनी चाहिए।[1] उन्होंने इस बात का कभी समर्थन नहीं किया कि मनुष्य तुच्छ वासनाओं तथा संकीर्ण अहं को तुष्ट करने में ही तल्लीन रहे।

समाजवादी होने के नाते जयप्रकाश नारायण आर्थिक समस्याओं को प्राथमिकता देते थे। इसलिए उनका आग्रह था कि देश की आर्थिक समस्याओं को तुरन्त हल किया जाय।[2] आर्थिक व्यवस्था तथा सांस्कृतिक जीवन के बीच कोई प्रत्यक्ष तथा अनिवार्य सम्बन्ध नहीं है। किन्तु यह भी सत्य है कि आधारभूत आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति के बिना सांस्कृतिक सृजनशीलता असम्भव है। इसलिए जयप्रकाश नारायण उन परिस्थितियों के निर्माण के पक्ष में थे जिनमें समान अवसर के आदर्श को साक्षात्कृत किया जा सके। संस्कृति के फलने–फूलने के लिए न्यूनतम आर्थिक स्तर की प्राप्ति अपरिहार्य है।

जयप्रकाश नारायण नारायण विश्व समाज के आदर्श को मानते थे। उनका कहना था कि संगठित सैनिकवाद तथा समग्रवादी व्यवस्थाओं ने जो विनाश का ताण्डव मचा रखा है उसके मुकाबले में विश्व समाज ही एशिया तथा अफ्रीका की दलित मानवता के साथ न्याय कर सकता है।[3]

जयप्रकाश नारायण भारतीय समाजवाद के क्षेत्र में माने हुए तथा सुविख्यात व्यक्ति हैं। यह उनका महत्त्वपूर्ण योगदान था कि उन्होंने भारत में समाजवादी आन्दोलन को कांग्रेस के झंडे के नीचे चल रहे राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम के साथ सम्बद्ध कर दिया। नरेन्द्रदेव तथा जयप्रकाश नारायण ने समाजवादी विचारधारा को जनता को साम्राज्यवादी राजनीतिक आधिपत्य तथा देशी सामन्तवाद की

***सहायक शिक्षक रा0 प्रा0 वि0, बभनौली मैनाटॉड़ प0 चम्पारण**

दासता से मुक्त करवाने की दिशा में मोड़ दिया। इस प्रकार उन्होंने समाजवादी दर्शन को दो युद्धों का समरघोष बनाया राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम तथा सामाजिक क्रान्ति।

डॉ० राममनोहर लोहिया का आग्रह रहा है कि एशिया के समाजवादियों का मौलिक चिन्तन तथा अभिक्रम का अभ्यास डालना चाहिए। उन्हें अपनी नीतियाँ उस सभ्यता के सन्दर्भ में निरूपित करनी हैं जो शताब्दियों पुराने निरंकुशवाद तथा सामन्तवाद के कूड़े–करकट में से उभरने का प्रयत्न कर रही हैं। एशियाई राजनीति की दुर्दशा का मुख्य कारण यह है कि उसमें कट्टर धार्मिक विश्वासों और राजनीतिक सोच–विचार का मिश्रण पाया जाता है। इससे पंथाभिमान तथा साम्प्रदायिकता का विष फैलता है। लोहिया ने ऐसे व्यापक तथा मौलिक सामाजिक दर्शन की आवश्यकता पर बल दिया है जो एशिया में व्याप्त बीमारियों का उपचार कर सके। राज्य में केन्द्रीकरण तथा विकेन्द्रीकरण की परस्पर विरोधी धारणाओं को समन्वित करने का प्रयत्न किया गया है। इस व्यवस्था के अन्तर्गत गाँव, मंडल (जिला), प्रान्त तथा केन्द्रीय सरकार का महत्त्व बना रहेगा और उन्हें एक कार्यमूलक संघवाद की व्यवस्था के अन्तर्गत एकीकृत कर दिया जायगा। कार्यों का सम्पादन उन्हें एकसूत्र में बाँध कर रखेगा। इस चतुस्तम्भी राज्य में जिलाधीश का पद समाप्त कर दिया जायेगा, क्योंकि वह राजनीतिक शक्ति के केन्द्रीकरण की बदनाम संस्था है। इसके अतिरिक्त मंडलों, गाँवों तथा नगरों की पंचायतें कल्याणकारी नीतियों तथा कार्यों का उत्तरदायित्व अपने ऊपर ले लेंगी।[4]

लोहिया विकेन्द्रीकृत समाजवाद के समर्थक थे। इसका अर्थ है छोटी मशीनें, सहकारी श्रम तथा ग्राम–शासन। पूँजी के संचय तथा बढ़ती हुई बेकारी को रोकने के लिए लोहिया ने छोटी मशीनों पर आधारित उद्योगों का समर्थन किया।

अपने जीवन के अन्तिम दिनों में लोहिया कहने लगे थे कि परम्परावादी तथा संगठित समाजवादी 'एक मरा हुआ सिद्धान्त तथा मरणशील व्यवस्था' है। इसलिए उन्होंने 'नवीन समाजवाद' का नारा लगाया।[5] इस नवीन समाजवाद के लिए उन्होंने छह–सूत्री योजना का निरूपण किया। आय तथा व्यय के क्षेत्र में अधिकतम समानता के स्तर को उपलब्ध करना अत्यावश्यक है। इसके लिए राष्ट्रीयकरण एक महत्त्वपूर्ण साधन है, किन्तु वह एकमात्र साधन नहीं है। विश्व में आर्थिक अन्तरनिर्भरता बढ़ती जा रही है, जिसके कारण यह आवश्यक हो गया है कि सम्पूर्ण विश्व में जीवन–स्तर को ऊँचा करने का प्रयत्न किया जाय। लोहिया ने वयस्क मताधिकार पर आधारित 'विश्व संसद' का समर्थन किया। यह एक जटिल तथा यूटोपियाई सुझाव प्रतीत होता है। लोहिया लोकतांत्रिक राजनीति स्वतंत्रता के पक्के समर्थक थे। वे चाहते थे कि वाणी की स्वतंत्रता, समुदाय बनाने की स्वतंत्रता तथा निजी जीवन की स्वतंत्रता के क्षेत्र सुरक्षित होने चाहिए, और किसी भी सरकार

को बलपूर्वक उसमें हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। उन्होंने सामान्य जनों के अधिकारों तथा प्रतिष्ठा की रक्षा के लिए वैयक्तिक तथा सामूहिक सविनय अवज्ञा की गाँधीवादी कार्यप्रणाली का समर्थन किया। इसका मनोवैज्ञानिक महत्त्व भी है।

समाजवादी दल के नेताओं में नरेन्द्रदेव तथा जयप्रकाश नारायण पर मार्क्सवाद का सबसे अधिक प्रभाव था। उनकी तुलना में लोहिया पर गाँधीवादी विचारधारा का प्रभाव अधिक था।

एक समाजवादी बुद्धिजीवी के रूप में राममनोहर लोहिया ने सूक्ष्म चिन्तन तथा मनन किया था। उन्होंने समाजवादी चिन्तन की समस्याओं को एशियायी दृष्टिकोण से देखने का प्रयत्न किया। वे कोरे पंथवादी नहीं थे। उन्होंने कर्म तथा चिन्तन के द्वारा मनुष्य के व्यक्तित्व के विकास की समस्या को सदैव ध्यान में रखा। वे चाहते थे कि मनुष्य के सम्पूर्ण जीवन तथा स्वभाव की अभिव्यक्ति हो। वे इस पक्ष में नहीं थे कि व्यक्तित्व के किसी एक विशिष्ट पहलू की एकांगी तथा सीमित वृद्धि हो।

जयप्रकाश नारायण ने कहा था कि "समाजवादी समाज एक ऐसा वर्गरहित समाज होता है, जिसमें सभी श्रमिक होते हैं। यह एक ऐसा समाज होता है जिसमें व्यक्तिगत सम्पत्ति के हित के लिए मानव–श्रम का शोषण नहीं होता, जिसमें सम्पूर्ण सम्पत्ति वास्तविक रूप में राष्ट्रीय होती है, जिसमें किसी को बिना किये की आय नहीं होती, जिसमें आय की अधिक असमानताएँ नहीं होती, जिसमें मानव–जीवन का संचालन एवं उन्नति योजनाबद्ध ढंग से होती है तथा जिसमें सब सबके लिए जीवित रहते हैं।"[6]

सन्दर्भ–सूची :

1. जयप्रकाश नारायण का साम्यवादियों को 18 नवम्बर, 1956 को लिखा गया पत्र।
5. नारायण, जयप्रकाश, इन इंडियन कॉंग्रेस फॉर कल्चरल फ्रीडम, द रानाडे प्रेस, 1951, पृ0–37.
6. वही, पृ0–39.
7. लोहिया, राम मनोहर, विलटूपावर एण्ड अदरराइटिंग्स, नवहिन्द पब्लिकेशन, हैदराबाद, 1956, पृ0–132.
8. 13 अक्टूबर, 1955 को लोहिया का वक्तव्य, प्रेस ट्रस्ट ऑफ इंडिया के सौजन्य से।
9. जयप्रकाश नारायण, टूवार्ड्स स्ट्रगल, पूर्वोक्त

****